Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XV, Issue No. 6, August-2018, ISSN 2230-7540

# चम्बा के मिंजर मेले की लोक गाथा एवं लोकगीत

**Dr. Kirti Garg***

Department of Music, Himachal Pradesh University, Shimla

***सार -*** ***चम्बा 550 ई0 में एक छोटी सी रियासत थी। जिसका प्रथम शासक था "मरू" तथा उसकी राजधानी थी "ब्रह्मपुर"। ब्रह्मपुर को आज "भरमौर" के नाम से जाना जाता है। इसी राजवंश के बीसवें राजा "साहिल वर्मा" ने 920 ई0 में चम्बा नगर बसाया। कहा जाता है कि साहिल वर्मा ने चम्बा नगर का नाम अपनी प्रिय पुत्री "चम्पावती" के नाम पर "चम्पा" रखा। धीरे-धीरे ये चम्पा नाम बदल कर चम्बा बन गया। ये भी कहा जाता है कि इस चम्बा नगर को बसाने में चम्पावती की ही प्रेरणा रही। चम्बा में एक गाथा यह भी चली आ रही है कि चम्बा में पानी का बहुत कष्ट था अतः पानी के संकट को दूर करने के लिए राजा साहिल वर्मा की रानी "नयना देवी" ने अपने आप को दिवार में चुनवा लिया था और अपना बलिदान दिया। तभी से चम्बा में पानी का संकट दूर हुआ। आज भी उसी स्थान पर माता सूही की याद में हर साल एक मेला भी लगता है।***

----------X----------

चम्बा एक बड़ा ही रमणीक स्थान है। यहाँ के पर्वत, झरने, नदी, झीलें व सुन्दर-सुन्दर दृश्य सभी को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। सुन्दरता के साथ-साथ यहाँ की लोक संस्कृति भी अपना एक अलग स्थान रखती है। जिसके अन्तर्गत् यहाँ की लोक गाथाएं, लोक गीत, लोक नृत्य व मेले-त्यौहार अपना एक अलग स्थान रखते हैं। यहाँ पर अलग-अलग प्रकार के देव उत्सव, संस्कार उत्सव, लोक उत्सव एवं मेले त्यौहार मनाए जाते हैं जिनका अलग-अलग महत्व है। जैसे – बसोया (वैशाखी) उत्सव, जातरा उत्सव, मणीमहेश उत्सव, मुण्डन संस्कार उत्सव, विवाह संस्कार उत्सव, यज्ञोपवीत उत्सव, नोआला उत्सव तथा मिंजर मेला, सूही मेला इत्यादि। इन सभी मेले-त्यौहारों एवं उत्सवों का अपना अलग-अलग महत्व रहता है। इन्हीं मेले-त्यौहारों में से चम्बा का "मिंजर मेला" अपना एक अलग महत्व रखता है।

मिंजर का मेला चम्बा के सभी मेलों में सबसे प्रसिद्ध माना जाता है। इस मेले का आरम्भ सावन के दूसरे रविवार को होता है। मिंजर मेले के आरम्भ के विषय में लोगों के भिन्न-भिन्न मत पाए जाते हैं। कुछ लोग इसे राजा साहिल वर्मा की विजय से जोड़ते हैं और इसका आरम्भ 10वीं शताब्दी से मानते हैं। कुछ लोग इसे कृषि पर्व मान कर धान और मकई के प्रादुर्भाव काल से जोड़ते हैं। मत कुछ भी हो लेकिन लोग इस मेले को प्राचीनकाल से चला आ रहा मेला मानते हैं। यदि मेले की दृष्टि से देखा जाए और मिंजर के महत्व को देखा जाए तो यह मेला कृषि से अपने सम्बन्ध को दर्शाता है और यदि मेले में चलने वाले जलूस में गाजे-बाजे सहित सेना (मिल्द्री) का चलना उस समय के राजा की विजय यात्रा को भी प्रकट करता है। इसलिए मिंजर मेले को विजय और कृषि पर्व मानना उचित प्रतीत होता है।

मिंजर मेले के आरम्भ के विषय में एक प्रसिद्ध गाथा भी उपलब्ध होती है। कहा जाता है कि रावी नदी कई सौ वर्ष पहले चम्बा नगर के चैगान वाले स्थान पर प्रवाहित होती थी जिनके दोनों ओर भगवान हरिराय और चम्पावती के मन्दिर स्थापित थे। उस समय एक साधु चम्पावती मन्दिर के साथ ही रहा करता था। वह साधु प्रतिदिन अपनी आध्यात्मिक शक्तियों द्वारा रावी नदी को पार किया करता था क्यों कि उस समय रावी नदी पर कोई पुल नहीं हुआ करता था। एक बार चम्बा के राजा और प्रजा ने मिलकर उस साधु-महात्मां से निवेदन किया कि वो कुछ ऐसा करें कि जिससे सभी लोग भगवान हरिराय के मन्दिर तक बिना किसी बाधा के पहुँच सकें। तब उस महात्मा ने एक यज्ञ प्रारम्भ किया और उस यज्ञ की अग्नी प्रज्जवलित की। फिर उस साधु ने भिन्न-भिन्न रंगो के धागों तथा मन्त्रों के उच्चारण द्वारा मिंजर तैयार की। यज्ञ द्वारा मिंजर तैयार करने का कार्य पूरे सात दिन तक चलता रहा। कहा जाता है कि इसी के बाद रावी नदी ने अपना रास्ता बदल लिया। इसके बाद यज्ञ के बचे हुए भाग और धागों को जिससे मिंजर तैयार की गई थी को भी रावी नदी में प्रवाहित कर दिया गया। कहते हैं कि उसी दिन से हर साल मिंजर मेले का उत्सव मनाया जाता है। यद्ये अब मेले का कोई प्राचीन ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलता केवल मौखिक रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी इस विषय पर लोक गाथाएँ और लोक गीत सुनने को मिलते हैं तथापि इस मेले का सम्बन्ध आज भी नदी और मिंजर से होने के कारण

www.ignited.in

इस मेले की प्राचीनता और महत्व को नकारा नही जा सकता। क्योंकि आज भी मिंजर पाँच या सात धागों से बनाई जाती है और नदी में बहाई जाती है।

कुछ लोगों का यह मानना है कि मिंजर मेले का आरम्भ राजा साहिल देव वर्मन जिन्होंने दसवीं शताब्दी में चम्बा नगर की सन्निपना की, द्वारा किया गया था। कहा जाता है कि जब राजा साहिल वर्मन काँगड़ा-धानी क्षेत्र को जीत कर वापिस लौट रहे थे तब उनके स्वागत और मंगल कामना हेतु प्रजा ने उन्हें धान की मिंजरें (बालियाँ) भेंट की थी। उनका स्वागत मिंजर भेंट द्वारा "नलोहरा" पुल पर किया गया था जहाँ से चम्बा को आने-जाने का रास्ता था। आज तक मिंजर उसी स्थान पर प्रवाहित की जाती है। कहा ये भी जाता है कि उसी विजय उत्सव में महाराजा ने अपनी सम्पूर्ण प्रजा को स्वर्ण तारों से बनी "मिंजरें" मिठाई के साथ वितरित की थीं और तभी से मिंजर मेले का आरम्भ व आयोजन चम्बा में किया जाने लगा। उस समय राजा के सभी दरबारी व प्रजा इस शुभ अवसर पर राजा के साथ हुआ करते थे।

इसी मेले के साथ एक बात यह भी जुड़ी है कि 1645 ई0 में जब राजा पृथ्वी सिंह दिल्ली यात्रा से लौट रहे थे तब वे अपने साथ सालीग्राम (एक प्रकार का पत्थर) खरीद कर लाए जो कि शाहजहाँ के खज़ाने में तोल के रूप में प्रयोग किया जाता था। उस समय शाहजहाँ ने राजा को सालीग्राम के साथ-साथ शाही निशान सूर्य और अन्य बहुमूल्य उपहार भेंट कर विदा किया तथा साथ ही शाहजहाँ ने मिजार् सफीबेग को अपना दूत नियुक्त करके राजा के साथ भेजा। मिर्ज़ा सफीबेग "गोटे"(ज़री) के काम के महारथी थे। कहा जाता है कि उन्होंने गोटे अर्थात् ज़री से बनी मिंजर पहली बार रघुवीर को मिंजर के मेले पर ही समर्पित की थी। कहा जाता है कि तभी से पहली मिंजर रघुवीर को चम्बा के मिर्ज़ा परिवार की ओर से ही भेंट की जाती है। इस बात से यह प्रतीत होता है कि ज़री की मिंजर देने की प्रथा राजा पृथ्वी सिंह द्वारा आरम्भ की गई थी।

मिंजर मेला प्रतिवर्ष श्रावण मास के दूसरे रविवार को आरम्भ होता है। जब से मिंजर मेले का आरम्भ हुआ तब से ही प्रति वर्ष राजा हाथी-घोड़ों पर सवार होकर जलूस में चलता था। कहते हैं कि एक बार राजा लक्ष्मण जो कि चम्बा के अन्तिम राजा हुए वह अगस्त 1948 में चम्बा से बाहर गए हुए थे तब मेले के आयोजकों ने रघुवीर को राजा के स्थान पर पालकी में बिठाकर ले जाने की परम्परा डाली। कहते हैं तभी से अब तक रघुवीर को पालकी में बिठाकर मिंजर के जलूस के साथ ले जाया जाता है। 1962 से तो देवियों को भी इस जलूस में सम्मिलित किया जाने लगा है। जिसमें सूही देवी, चामुण्डा देवी, शक्ति देवी आदि देवियों की पालकियाँ भी सम्मिलित होती हैं।

सन् 1955 में म्यूनिसिपल कमेटी, चम्बा द्वारा गेरूए रंग के मिंजर ध्वज को शुरू किया गया और सावन के दूसरे रविवार को चम्बा चैगान में मिंजर मेले की शुरूआत पर इस ध्वज को फहराया जाता है और उसी दिन से चम्बा में इस मेले की चहल-पहल एक सप्ताह के लिए शुरू हो जाती है।

प्रतिवर्ष श्रावण मास के दूसरे रविवार को ज़िला निवासी अपने वस्त्रों जैसे कोट, कमीज़ आदि वस्त्रों के बाँयी ओर धान की मिंजर की तरह रेशम, गोटे अर्थात् ज़री अथवा रंगीन धागों से मिंजर बना कर बाँधते हैं और फिर तीसरे रविवार को फल, पुष्प तथा मिठाई के साथ उस मिंजर को वरूण देवता के पूजन के उपरान्त रावी नदी में प्रवाहित करते हैं। दूर-दराज़ के लोग मिंजर को समीप के नदी-नालों में ही प्रवाहित कर देते हैं। यही दिन मेले का सबसे महत्वपूर्ण दिन होता है।

सन् 1943 तक एक जीवित भैंसे को भी रावी नदी में बलि के रूप में फेंका जाता था। यदि भैंसा ठीक-ठाक नदी के दूसरी ओर तैर कर निकल जाता था तो इस बात को बहुत ही शुभ माना जाता था। ऐसा इसलिए माना जाता था कि चम्बा की आने वाली सभी मुश्किलें उस भैंसे के साथ नदी पार चली जाती थीं। लेकिन आजकल भैंसे के स्थान पर एक नारियल, एक रूपया, एक फल और मिंजर इन सब को एक लाल कपड़े में जिसे "लुहान" कहा जाता है बाँधकर रावी नदी में फेंक दिया जाता है। इसके बाद ही सभी उपस्थित लोग अपनी-अपनी मिंजरों को रावी नदी में प्रवाहित करते हैं।

कहा जाता है कि पहले मेले की समाप्ति के पश्चात् तीन दिन तक एक छोटा सा मेला भी लगा करता था जिसे "भोजड़ी" कहा जाता था लेकिन आज इस मेले का प्रचलन समाप्त हो गया है। सप्ताह भर चलने वाले इस उत्सव में एक और भी प्रचलन है कि बड़े लोग अपने से छोटों को, बाल-बच्चों एवं समीप के रिश्तेदारों को यथासामर्थ्य पैसे भी दिया करते हैं, जिसे लोक भाषा में "भोजड़ू" कहते हैं। यह प्रथा पहले से चली आ रही है और आज भी प्रचलित है। इस मेले के शुभ अवसर पर अपने सगे-सम्बन्धियों और बेटियों को बुलाकर तरह-तरह के स्थानीय पकवान बनाकर खिलाए जाते हैं जैसे- बबरू(एक प्रकार की तली हुई मीठी या नमकीन रोटी) तथा बड़े बनाकर खाए व खिलाए जाते हैं। आजकल इस मेले में सांस्कृतिक कार्यक्रमों व खेलों आदि का आयोजन भी किया जाता है। कई तरह की प्रतियोगिताएँ करवाई जाती हैं। तरह-तरह की प्रदर्शनियाँ लगाई जाती हैं। बच्चे-बुढ़े, स्त्री-पुरूष व युवा सभी मेले का भरपूर आनन्द उठाते हैं। केवल हिमाचल से ही नहीं अपितु देश-विदेश से भी पर्यटक यहाँ आकर इस मेले का आनन्द लेते हैं।

www.ignited.in

राजाओं के समय में इस उत्सव को लाव-लश्कर व गाजे-बाजे के साथ जलूस के रूप में मनाया जाता था। जलूस में मुखिया यहाँ का राजा हुआ करता था। आज भी इस मेले को विभिन्न छड़ियों, छत्रों व देवी-देवताओं की झांकियों तथा विभिन्न प्रकार के लोक वाद्यों सहित जलूस रूप में मनाया जाता है। चम्बा शहर में एक खुला व बड़ा मैदान है जो कि "चम्बा चैगान" के नाम से जाना जाता है, इस मैदान में सदियों से यह मेला मनाया जा रहा है। आज इस मेले की प्रसिद्धि बहुत अधिक हो गई है और आज इसे राजकीय उत्सव के रूप में मनाया जाता है। स्थानीय संस्थाओं के साथ-साथ प्रादेशिक सरकार स्वयं भी इस मेले का आयोजन करती है। "मिंजर" चम्बा का एक महत्वपूर्ण मेला व उत्सव है।

इस मेले से सम्बन्धित कुछ लोक गीत भी चम्बा क्षेत्र में प्रचलित हैं जिनका गायन इस अवसर पर किया जाता है। कुन्जड़ी मल्हार इस मेले के प्रसिद्ध लोक गीत हैं। इस अवसर के एक लोक गीत का वर्णन इस प्रकार है ---

**लोकगीत**

राजा तेरा देस सोहणा रे।

नदियां दे बारे बारे हो।।

राजा तेरा देस ----

अप्पु चलदा मिंजरां दे मेले जो।

राणी तेरी चैढ़ी रे देहरे हो।

फौजां तेरी खड़ियाँ चैगाना।

नदियां दे बारे-बारे हो।

राजा तेरा देस सोहणा रे।

नदियां दे बारे-बारे हो।

राजा तेरा देस -------

अप्पु चलदा हाथी कने घोड़े ,

राणी तेरी रथड़ी हंडोले।

फौजा तेरी खड़ियाँ चैगाना,

नदियां दे बारे-बारे हो।

राजा तेरा देस सोहणा रे,

नदियां दे बारे-बारे हो।

राजा तेरा-------

**सन्दर्भ सूची**

भोजपुरी लोकगाथा : डॉ॰ सत्य्व्रात सिन्हा;

लोकसाहित्य की भूमिका : डॉ॰ कृष्णदेव उपाध्याय;

नाथ संप्रदाय : डॉ॰ हजारीप्रसाद द्विवेदी;

भोजपुरी भाषा और साहित्य : डॉ॰ उदय नारायण तिवारी।

**Corresponding Author**

**Dr. Kirti Garg***

Department of Music, Himachal Pradesh University, Shimla

www.ignited.in